राजस्थान में निर्वाचन, राजनीति एवं प्रशासन

डॉ. पप्पूराम कोली 'व्याख्याता' राजनीति विज्ञान
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, प्रतापगढ (राजस्थान)

– आलेख –

1. स्वतंत्रता से पूर्व राजस्थान में निर्वाचन, राजनीति एवं प्रशासन–

वर्तमान राजस्थान 1947 में देश की आजादी से पूर्व 'राजपूताना" कहलाता था। राजस्थान का निर्माण 19 नरेशीय राज्यों व 3 उपराज्यों को संगठित करके किया गया है। अजमेर व आबू (जिन्हें 1956 में सम्मिलित किया गया है) के संभागों को छोड़कर समस्त राजस्थान नरेशों द्वारा शासित प्रशासनों का समूह है। अन्य किसी भी राज्य में राजतंत्र की इतनी सुदृढ़ परम्पराओं का व्यापक प्रभाव 1947 से पूर्व नहीं था राजस्थान में सम्मिलित इकाइयों में भी राजतंत्र में प्रशासनिक रूप से एकता नहीं रही, क्योंकि एक और तो तीन नरेशीय राज्यों में (भरतपुर, धौलपुर व टोंक) राजपूतों का आधिपत्य नहीं या दूसरी ओर सभी राजतंत्रों का इतिहास समान रूप से लम्बा व गरिमामयी नहीं रहा। इन नरेशीय राज्यों की विशेषता रही है कि प्रशासन एक ही जाति विशेष के हाथों में रहा है। इसमें भी शासन की बागडोर एक वंश के हाथ में रही। इस प्रकार के शासन का प्रमुख केन्द्र नरेश या राजा हुआ करता था। यह राजा निरकुंश होकर भी राज्य के प्रमुख सरदारों या जागीरदारों के ऊपर निर्भर रहता था। स्पष्ट है कि राजस्थान में जागीरदारी प्रथा कायम थी। इस प्रथा के अनुसार प्रत्येक नरेश का राज्य प्रशासनिक दृष्टि से कई जागीरों में विभक्त रहता था तथा प्रत्येक जागीरदार अपनी जागीर का स्वतंत्र शासक होता था, पर युद्ध के समय उसे अपने नरेशों को सैनिक सहायता देनी होती थी तथा राज्याभिषेक व अन्य राजकीय समारोह में उसकी उपस्थिति आवश्यक मानी जाती थी। यहां यह बात स्मरणीय है कि ये जागीरदार नरेश की जाति या उपजाति का ही होता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि राजस्थान की राजनीति व प्रशासन में जातिवाद का प्रभाव सदैव से रहा है। इसमें भी राजपूत जाति का ही एकाधिकार विशेष रूप से रहा है। भरतपुर, धौलपुर जाट जाति तथा टोंक में मुस्लिम

शासक रहे हैं। राजतंत्रीय व्यवस्था में राजपूतों के अतिरिक्त ब्राह्मण और बणिया प्रभावशाली और महत्वपूर्ण पदों पर कार्य करते रहे हैं। प्रायः कृषक जातियां, दलित और आदिवासी भी सत्ता में भागीदारी अपेक्षित नही रही।

2. स्वतंत्रता के पश्चात राजस्थान में निर्वाचन, राजनीति एवं प्रशासन–

निर्वाचन की राजनीति लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं का मूल आधार स्तम्भ है। यह कटु सत्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात राजस्थान का प्रशासन भी अन्य सभी राज्यों की तरह जनता के द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथों में चला गया। राजस्थान में भी विधिवत चुनाव द्वारा विधान सभा का गठन हुआ। श्री जयनारायण व्यास राज्य के प्रथम मुख्यमंत्री बने, और फिर प्रारम्भ हुआ राजनीति में जातीय समीकरणों का सिलसिला । परिणास्वरूप मुख्यमंत्री के पद के लिए राजनीतिक अस्थिरता दृष्टिगोचर होने लगी परन्तु मोहनलाल सुखाड़िया (जिन्हें राजस्थान का निर्माता कहा जाता है) ने राजनीति और प्रशासन में स्थिरता लाने का प्रयास किया। श्री सुखाड़िया 1954 से 1971 तक राजस्थान के एकमात्र प्रशासक रहे। उन्होंने राजस्थान मे प्रशासनिक अभिनवीकरण का कीर्तिमान स्थापित किया। उन्होंने राजस्थान में पंचायतीराज की स्थापना की और गांधीजी के लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के स्वप्न को साकार किया। उनके प्रयासों के कारण गांधी जयन्ती 2 अक्टूबर 1959 को राज्य में 7394 पंचायते, 232 पंचायत समितियां व 26 जिला परिषद स्थापित हुई। इस तरह प्रशासन का विकेन्द्रीकरण हुआ, पर जातिवाद का प्रभाव और जातीय समीकरणों का खेल राजनीति में और तीव्रता से चलने लगा। श्री सुखाड़िया के बाद जनता पार्टी के श्री भैरोसिंह शेखावत 1977–1980, 1990–1992, 1993–1998 के बीच काफी अर्शे तक मुख्यमंत्री रहे और जाति को राजनीतिक जामा पहनाया। इनके समय में भी राज्य में अच्छा विकास कार्य हुआ और उपेक्षित जाति भी सत्ता में शामिल हुई।

श्रीमती सोनिया गांधी राष्ट्रीय अध्यक्षा कांग्रेस पार्टी की सहमति से संख्या और प्रभाव में कम महत्वपूर्ण जाति अन्य पिछड़ा वर्ग (माली) के श्री अशोक गहलोत स्वच्छ व ईमानदार छवि के व्यक्ति को राज्य के सत्रहवें मुख्यमंत्री 1998 के रूप में नियुक्त किया। उन्हें भी प्रभावशाली जाति जाट द्वारा हटाये जाने का निरन्तर प्रयास किया गया। राज्य कांग्रेस का जाट और ब्राह्मण नेतृत्व भी सत्ता अपने पास लाने के लिए प्रयासरत है। इस काल में श्री

अशोक गहलोत ने राजस्थान के विकास में विविध क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कार्य किये। किन्तु राज्य कर्मचारियों के साथ सम्मानजनक व्यवहार नहीं करने के परिणामस्वरूप सत्ता से हाथ धोना पड़ा।

श्रीमती वसुन्धरा राजे 2003 में राजस्थान की मुख्यमंत्री (सत्ता) की बागडोर सम्भाली। विगत पांच वर्षो में विकास कार्य भी बहुत कराये किन्तु राजस्थान की सामाजिक समरता को बिगाड़ने के लिए जिम्मेदार भी उन्हें ठहराया जा सकता है। दो प्रमुख जातियों क्रमशः मीणा गुर्जर को आमने सामने लड़ाने हेतु जो राजनीतिक सत्ता का खेल–खेला गया उसे राजस्थान की आम जनता कभी माफ नहीं कर सकेगी। यहीं नहीं अपितु अपने शासनकाल में 79 लोगों को राजस्थान पुलिस प्रशासन की गोलियों से मृत्यु को प्राप्त होना पड़ा। यह सब पुनः राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का दुष्कृत्य कृत था। यद्यपि श्रीमति वसुन्धरा राजे ने अपने कार्यकाल में राजकीय कर्मचारियों को खुश रखा।

दिसम्बर 2008 में अल्पमत में होने के बाद भी सर्वसम्मति से कांग्रेस पार्टी के विधायक दल का नेता श्री अशोक गहलोत को चुना गया तथा द्वितीय बार राजस्थान के मुख्यमंत्री बने। राजस्थान कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष प्रो. सी. पी. जोशी के एक वोट से हारने के बाद भी मुख्यमंत्री बनने की मंशा निरन्तर बनी रही। निर्दलीयों के सहयोग से मुख्यमंत्री का पद तो श्री अशोक गहलोत ने प्राप्त कर लिया है किन्तु कार्यकाल को पूरा कर पायेंगे यह देखने की बात है ?

राजस्थान की राजनीती में जाति की भूमिका :–

1. प्रत्याशियों के चयन में जाति की भूमिका– राजस्थान की निर्वाचन की राजनीति में महत्वपूर्ण कारक जाति है। जाति के आधार पर ही सभी राजनीतिक दल प्रत्याशियों का चयन करते हैं चाहे चुनाव विधानसभा का हो या लोकसभा का हो। उदाहरण के लिए अजमेर पूर्व में सिंधी मतदाताओं की संख्या बहुसंख्यक है। अतः इस क्षेत्र से सभी दल किसी सिंधी को ही खड़ा करते हैं। नागौर संसदीय क्षेत्र में जाट बाहुल्य क्षेत्र है। यहां जाटों को ही लोकसभा के लिए टिकट दिया जाता है। दौसा व कोटपुतली गूर्जर बाहुल्य क्षेत्र होने से सभी राजनीतिक दल गुर्जर जाति के व्यक्ति

को ही उम्मीदवार बनाते हैं। अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों के चयन का आधार भी एक तरह से जातिवाद ही है।

2. नेता का चुनाव और राजनीति– विधान मण्डलों, पंचायतों, पंचायत समितियों, जिला परिषदों आदि के नेताओं व अध्यक्षों के चुनाव में भी जातियों की अहम भूमिका रही है। पंचायतों जैसी संस्थाओं में जाति की भूमिका महत्वपूर्ण रहती है। यदि किसी विधान मण्डल में किसी वर्ग विशेष का बहुमत है तो नेता अधिकतर उसी वर्ग का चुना जाता है। पंचायतों में सरपंच भी वहीं चुना जाता है जिसकी जाति का वहां बहुमत है। राजस्थान में हुये पंचायत चुनाव इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। राजस्थान की पंचायत समितियों के प्रधान तथा जिलाप्रमुख जाति विशेष के सदस्यों का बहुमत होने के कारण चुना गया या फिर उनका समर्थन होने के कारण उन्हें चुना गया। इन चुनावों में पार्टी विप का भी उल्लंघन करने में नहीं हिचकते हैं, इससे स्पष्ट होता है कि नेताओं, प्रधानों, सरपंचों व जिला प्रमुखों के चुनावों में जातियों की अहम भूमिका रहती है।

3. मतदान – व्यवहार एवं जाति– मतदान व्यवहार को प्रभावित करने का प्रमुख कारण जाति का प्रभाव है। राजस्थान में एक प्रसिद्ध कहावत भी है 'वोट और बेटी तो जात वाले को ही देना।' यह निर्विवाद सत्य है कि जातिवाद ने मतदान व्यवहार को बहुत प्रभावित किया है। यद्यपि यह बात जनतंत्र प्रणाली के लिए घातक सिद्ध हुई है, पर जाति के बंधन को अभी हम तोड़ नहीं सके हैं। तोड़ना तो दूर हमारे ऊपर जातिवाद की पकड़ और मजबूत हो रही है। कोई भी चुनाव जाति के प्रभाव से मुक्त नहीं है। अपनी जाति का उम्मीदवार चाहे वह अयोग्य ही क्यों न हो मतदान का अधिकारी तो वही है। प्रो. रजनी कोठारी ने मतदान व्यवहार पर जाति के प्रभाव के बारे में अध्ययन किया है तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि जाति का प्रभाव मतदान व्यवहार पर ग्रामीण क्षेत्रों में ज्यादा पड़ता है। गांवों में जाति के बंधन ज्यादा कठोर होते हैं। गांवों के 30 प्रतिशत से भी अधिक मतदाता जाति के आधर पर ही मतदान करते हैं। शहरों में 15 प्रतिशत मतदान जाति के आधार पर किया जाता है। सेवा

भावना योग्यता और उम्मीदवार का व्यक्तित्व मतदान के अन्य तत्व होते हैं। जो गौण हो जाते हैं। यद्यपि कुछ हद तक ये तत्व भी मतदान व्यवहार को प्रभावित करते है। मतदान विश्लेषणों से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि जाति के सामने पार्टी के प्रति निष्ठा भी कम हो जाती है। मतदाता की निष्ठा किसी दल विशेष के प्रति हो सकती है पर मतदान के समय जाति के प्रति उसकी निष्ठा दल के प्रति निष्ठा को वाधित कर सकती है। यही कारण है कि जातिगत आधार के मजबूत होने के कारण एक अयोग्य उम्मीदवार योग्य उम्मीदवार को परास्त कर विजयी हो जाता है। नागौर जिले में जातिवाद का प्रभाव देखा जा सकता है। लोकसभा चुनाव में जनता लहर चल रही थी उस लहर में भी इसी क्षेत्र से जाट नेता श्री नाथूराम मिर्धा जाति के आधार पर ही जीते थे। ये ही रास्थान से एक मात्र कांग्रेसी नेता ये जो विजयी हुए। उसकी जीत का आधार दलगत निष्ठा नहीं थी वरन जातिगत निष्ठा ने ही इन्हें विजयी बनवाया। राजस्थान के अजमेर जिले से विधानसभा के लिए आठ सदस्यों का चुनाव होता है। पिछले विधान सभा चुनाव 2008 के पूर्व के चुनावों 1993 में भाजपा की आंधी चली थी और 8 में से 7 सदस्य भाजपा के विजयी हुए थे किन्तु नसीराबाद विधानसभा क्षेत्र से विजयी होने वाले एक मात्र कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार श्री गोविन्दसिंह गुर्जर की विजय का श्रेय इनकी जाति गुर्जर को जाता है। यह क्षेत्र गुर्जर बाहुल्य क्षेत्र है और यहां से गुर्जर उम्मीदवार ही विजयी रहता है फिर भी चाहे वह किसी भी दल का क्यों न हो। विधानसभा चुनाव 1993 में किशनगढ़ विधानसभा क्षेत्र से भी जगदीश धनकड़ बाहरी उम्मीदवार होते हुए भी जाट जाति का होने के कारण भाजपा के उम्मीदवार पर भारी पड़े। इन सबसे यहीं निर्णय निकलता है कि शिक्षा के प्रसार एवं विज्ञान की उन्नति के बावजूद जाति का प्रभाव अभी कम नहीं हुआ है। मतदान व्यवहार जातिगत भावना एवं निष्ठा से बहुत हद तक प्रभावित होता आया है और आगे भी होता रहेगा। जातियों के हित, स्वार्थ, आरक्षण की नीति, वोट बैंक की अवधारणा, अशिक्षा, जाति के मुखिया का प्रभाव, दलगत राजनीति, सत्ता, भूख, कुर्सी से चिपके रहने की प्रवृत्ति, दलित जातियों के प्रति अत्याचार व अन्याय ऐसे तत्व है जो मतदान व्यवहार पर जातिवाद की पकड़ को जारी रखने में काफी सहायक रहे हैं।

4. पदों का आवंटन व जाति जाति की भूमिका देश, प्रदेश से विधान मण्डलों, लोकसभा मंत्रियों के पदों के आवंटन में महत्वपूर्ण रही है। सभी मुख्यमंत्री मंत्रालयों व मंत्री पदों का आवंटन करते समय ध्यान रखते हैं कि सभी वर्गों व जातियों को समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त रहे। मंत्री बनाते समय इस बात को भी ध्यान में रखा जाता है कि विधान मण्डल में किस जाति के लोगों का बहुमत है मतदाता को खुश करने तथा उसे रिझाने के लिए जरूरी है कि उसकी जाति के प्रभावशाली विधायक को मंत्री पद दिया जाता है। ऐसा न होने पर मतदाता रूष्ट हो सकता है या फिर वह विधायक बगावत पर उतर आता है परिणामस्वरूप दल बदल शुरू हो जाता है। राजस्थान में श्री भैरोसिंह सरकार में रमजान खां को 1990 में मंत्री इसलिए बनाया गया था कि अजमेर से वे ही अकेले मुस्लिम विधायक थे। उनका मुसलमान होना उनके लिए वरदान सिद्ध हुआ। भाजपा में एक तो किसी मुस्लिम नेता का होना वैसे ही बहुत महत्वपूर्ण बात होती है। खुश करना कोई कम महत्व की बात नहीं है। यह इस बात का पुष्ट प्रमाण है कि जाति की राजनीति में अहम भूमिका रहती है। मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे के कार्यकाल में भी यूनुस खान को यातायात मंत्री बनाया गया।

5. राजनीतिक दलों के संगठन एवं जाति जाति की भूमिका को हम दलों के आंतरिक संगठन में भी देख सकते हैं। दलों के संगठनात्मक चुनावों में भी जातियों के आधार का ध्यान रखा जाता है। जातियों के आधार पर वहां गुट बन जाते हैं और ये गुट दबाव की राजनीति का सहरा लेते हैं। राजस्थान में जाटों का प्रभुत्व होने के कारण कांग्रेस पार्टी के संगठनात्मक स्वरूप पर जाटों का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यहां परसराम मदेरणा के गुट का कांग्रेस पार्टी के संगठनात्मक स्वरूप का काफी प्रभाव रहा है। श्री हरिदेव जोशी को प्रदेश अध्यक्ष की कुर्सी इस गुट के कारण ही छोड़नी पड़ी। सुश्री गिरिजा व्यास को द्वितीय बार कांग्रेस प्रदेश अध्यक्षा इसलिए बनाया गया है कि वह एक तो ब्राह्मण जाति से सम्बन्धित है तथा दूसरा महिला होने के कारण भी उसके लिए सुखद रहा। श्री अशोक गहलोत लम्बे समय

तक कांग्रेस प्रदेश अध्यक्ष बने रहे, क्योंकि वे पिछड़ा वर्ग से सम्बन्धित थे। 1998 में राजस्थान में प्रथम बार पिछड़ी जाति का कोई नेता मुख्यमंत्री बना। अन्य प्रमुख जातियों को भागीदारी देने के लिए कुछ महत्वपूर्ण पद उन्हें भी दिये गये। इसमें कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्षा का पद सुश्री गिरिजा व्यास को विधानसभा के अध्यक्ष पद परसराम मदेरणा को और मंत्रीमण्डल में विशेष महत्व वैश्य जाति के नेता प्रद्युम्न सिंह को दिया गया। यहां तक कि राज्य में सरकारी नौकरियों में नियुक्ती करने वाली संस्था राजस्थान लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष का अनुसूचित जाति के वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी श्री एन.के. बैरवा को सन् 2000 में भी जातिगत समीकरण और दबाव के आधार पर नियुक्त किया गया। प्रशासनिक अधिकारी के जातिगत दबाव से सचिव, निदेशक और जिलाधीश का पद प्राप्त करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि जाति की भूमिका राजनीति में बड़ी महत्वपूर्ण रही है ऐसा लगता है कि आज जाति का राजनीतिकरण हो गया है तथा जाति का सामाजिक और धार्मिक महत्व तो कम हो गया है परन्तु राजनीति में उसका महत्व बहुत बढ़ गया है। जातियों की राजनीति अब सत्ता हथियाने में है। नेता भी जातिगत भावना को सत्ता प्राप्ति के लिए लुभाते हैं। अपने स्वार्थ, राजनीतिक स्वार्थ की शर्तो के लिए ही ये लोग जाति का उपयोग करते हैं और जातिगत निष्ठा को अपने राजनीतिक स्वार्थ के लिए उपयोग में लाते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. कोठारी रजनी "कास्ट इन इण्डियन पॉलिटिक्स" ओरियेन्ट लोगमैन नई दिल्ली 1970
2. सैन, क्षितिज मोहन, "भारत वर्ष में जाति भेद" दिल्ली, 1970
3. मंत्री गशेण, "गांधी और अम्बेडकर" प्रभात प्रकाशन दिल्ली 1999 पृ.सं. 17
4. टोड़ जेम्स, "एनाल्स एण्ड एटीक्यूटी ऑफ राजस्थान" आक्स फोर्ड (लंदन)1920 पृ.सं. 8
5. बी. एन. पानगडिया "राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम" हिन्दी ग्रन्थ अकादमी (जयपुर) पृ.सं. 148
6. मेहर जहूर खां / गहलोत सुखवीर सिंह "राजस्थान स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास" श्री जगदीशसिंह गहलोत, शोध संस्थान (जोधपुर) 1992 पृ.सं.।

7. चन्द्र मौलिसिंह, अशोक शर्मा एवं सुरेश गोयल राजस्थान में राज्य प्रशासन, आर. बी. एस.ए. पब्लिशर्स, चौड़ा रास्ता, जयपुर।
8. राठौड़, एल. एस. "पोलिटिक एण्ड कान्स्टीटयूशन डवलपमेन्ट इन प्रिंसली स्टेटस ऑफ राजस्थान" 1920–49 रिसर्च पब्लिशर्स, जोधपुर 1986
9. कमल, के. एल. "पार्टी पोलिटिक्स इन इण्डियन स्टेटः स्टेडी ऑफ दी मैन पॉलिटिकल पार्टीज इन राजस्थान" चन्द्र एण्ड कम्पनी, दिल्ली 1965।
10- मेयर, ए.सी. "कास्ट एण्ड लोकल पॉलिटिक्स इन इण्डिया" इन फिलिप मैसन (सम्पादित) इण्डिया एण्ड सिलोन यूनिटी एण्ड डाइवर्सिटी, न्यूयार्क ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस 1967